सेवट्टेण य गम्मइ, आदीदो चदुसु कप्पजुगलोत्ति ।
तत्तो दुजुगलजुगले, खीलियणारायणद्धोत्ति ॥29॥

- अन्वयार्थ - (सेवट्टेण य) सृपाटिका संहनन से (आदीदो) सौधर्म युगल से (चदुसु कप्पजुगलोत्ति) चार कल्पयुगलों में अर्थात् आठवें स्वर्ग तक उत्पन्न होता है।
- (तत्तो) उससे ऊपर (दु जुगलजुगले) दो दो युगलों में (खीलियणारायणद्धोत्ति) कीलीत और अर्धनाराच संहनन से मरकर उत्पन्न होता है अर्थात् कीलित संहनन से शतारयुगलपर्यन्त अर्थात् बारहवें स्वर्ग तक और अर्धनाराच संहनन से आरण-अच्युत पर्यन्त उत्पन्न होता है ॥29॥

www.JainKosh.org

णवगेविज्जाणुद्दिस-णुत्तरवासीसु जांति ते णियमा ।
तिदुगेगे संघडणे, णारायणमादिगे कमसो ॥30॥

- अन्वयार्थ - (णारायणमादिगे) नाराचादि (तिदुगेगे) तीन, दो और एक (संघडणे) संहननों से (णियमा) नियम से (ते) वे जीव (कमसो) क्रम से (णवगेवेज्ञाणुद्दिसणुत्तरवासीसु) नौ ग्रैवेयक, नौ अनुदिश और पाँच अनुत्तर विमानवासियों में उत्पन्न होते हैं ॥30॥

सण्णी छस्संघडणो, वज्जदि मेघं तदो परं चावि ।
सेवट्टादीरहिदो, पणपणचदुरेगसंघडणो ॥31॥

- अन्वयार्थ – (छस्संघडणो) छह संहननों से युक्त (सण्णी) संज्ञी जीव (यदि नरक में उत्पन्न हो तो) (मेघं) मेघा नामक तीसरे नरक तक जाते हैं।
- (सेवट्टादीरहिदो) सृपाटिकादि संहनन से रहित (पणपणचदुरेगसंघडणो) पाँच, पाँच, चार और एक संहनन वाला जीव (तदो परं चावि) उससे आगे भी जाते हैं । अर्थात् सृपाटिकारहित पाँच संहनन वाला जीव मरकर पाँचवी पृथ्वीपर्यन्त, अर्धनाराचपर्यन्त चार संहनन वाला जीव छठी पृथ्वीपर्यन्त और एक वज्रऋषभनाराच संहनन वाला जीव सातवीं पृथ्वी तक उत्पन्न होते हैं ॥31॥

संहनन	स्वर्ग	नरक
सृपाटिका संहनन	8वें स्वर्ग तक	तीसरे नरक तक
कीलित संहनन	12वें स्वर्ग तक	पांचवें नरक तक
अर्धनाराच संहनन	16वें स्वर्ग तक	छठे नरक तक
नाराच संहनन	नव ग्रैवेयक तक	छठे नरक तक
वज्रनाराच संहनन	नव अनुदिश तक	छठे नरक तक
वज्रऋषभ नाराच संहनन	5 अनुत्तर तक	सातवें नरक तक

अंतिमतिगसंघडणस्सुदओ पुण कम्मभूमिमहिलाणं ।
आदिमतिगसंघडणं, णत्थि त्ति जिणेहिं णिद्दिट्ठं ॥32॥

- अन्वयार्थ - (कम्मभूमिमहिलाणं) कर्मभूमि में महिलाओं के (अंतिमतिगसंघडणस्सुदओ) अंतिम तीन संहननों का उदय होता है ।
- (पुण) पुनः (आदिमतिगसंघडणं) आदि के तीन संहनन (णत्थित्ति) नहीं होते — ऐसा (जिणेहिं) जिनेन्द्र भगवान ने (णिद्दिट्ठं) कहा है ॥32॥

कर्मभूमि की स्त्रियों के संहनन

असंप्राप्तासृपाटिका	वज्रऋषभनाराच
कीलित	वज्रनाराच
अर्ध नाराच	नाराच
ही होते हैं।	नहीं होते हैं।

प्रश्न: भोगभूमि की स्त्रियों के कौन-सा संहनन होता है ?

मूलुण्हपहा अग्गी, आदावो होदि उण्हसहियपहा ।
आइच्चे तेरिच्छे, उण्हूणपहा हु उज्जोओ ॥33॥

- अन्वयार्थ – (मूलुण्हपहा) जो मूल में उष्ण हो और जिसकी प्रभा भी उष्ण हो वह (अग्गी) अग्नि है ।
- (उण्हसहियपहा) जो उष्णप्रभा सहित हो वह (आदावो) आताप (होदि) है । वह (आइच्चे) सूर्य में होता है।
- (उण्हूणपहा) जो उष्ण प्रभारहित है वह (उज्जोओ) उद्योत है । वह (तेरिच्छे) तिर्यंच में होता है ॥33॥

उष्ण, आतप, उद्योत कर्म में अंतर

पद	मूल	प्रभा	उदाहरण
उष्ण कर्म	उष्ण	उष्ण	अग्निकायिक
आतप कर्म	अनुष्ण	उष्ण	सूर्य विमान के पृथ्वीकायिक जीव
उद्योत कर्म	अनुष्ण	अनुष्ण	चन्द्रबिम्ब के पृथ्वीकायिक जीव

देहे अविणाभावी, बंधणसंघाद इदि अबंधुदया ।
वण्णचउक्केऽभिण्णे, गहिदे चत्तारि बंधुदये ॥34॥

- अन्वयार्थ – (देहे) शरीर के साथ (बंधणसंघाद) बन्धन और संघात (अविणाभावी) अविनाभावी है (इदि) इस कारण से (अबंधुदया) इन दस प्रकृतियों का बन्ध और उदय पृथक् नहीं लिया है ।
- (वण्णचउक्के) वर्णचतुष्क को (अभिण्णे) अभिन्न विवक्षा से (गहिदे) ग्रहण करने पर (बंधुदये) बंध और उदय में (चत्तारि) चार ही प्रकृतियाँ होती हैं ॥34॥

5 शरीर + 5 बंधन + 5 संघात = 15

अभेद अपेक्षा में (15 – 5 शरीर =) 10 प्रकृतियाँ कम हो जाती हैं

क्योंकि बंधन और संघात कर्म शरीर नामकर्म के अविनाभावी हैं ।

5 वर्ण + 2 गंध + 5 रस + 8 स्पर्श = 20

↓ ↓ ↓ ↓

1 वर्ण + 1 गंध + 1 रस + 1 स्पर्श = 4

अभेद अपेक्षा में (20 – 4 =) 16 प्रकृतियाँ कम हो जाती हैं

क्योंकि अभेद से ग्रहण किया है ।

विशेष

ऐसी अभेद विवक्षा बन्ध और उदयरूप प्रकृतियों में ही की है, सत्त्व में नहीं ।

मिश्र मोहनीय और सम्यक्त्व मोहनीय बन्ध-योग्य नहीं हैं, अतः मोहनीय में बंध-योग्य में से दो प्रकृतियाँ घटायी हैं ।

पंच णव दोण्णि छव्वीसमवि य चउरो कमेण सत्तट्ठी ।
दोण्णि य पंच य भणिया, एदाओ बंधपयडीओ ॥35॥

- अन्वयार्थ – (पंच) पाँच ज्ञानावरण, (णव) नौ दर्शनावरण, (दोण्णि) दो वेदनीय, (छव्वीसमवि) छब्बीस ही मोहनीय, (चउरो) चार आयु, (सत्तट्ठी) सडसठ नाम, (दोण्णि) दो गोत्र, (य) और (पंच) पाँच अंतराय (एदाओ) ये (बंधपयडीओ) बंध प्रकृतियाँ (120) (भणिया) कहीं हैं ।
- क्योंकि मोहनीय में सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्त्व प्रकृति बन्ध में नहीं है यह पहले कह चुके हैं ।
- नामकर्म में पहले गाथा में 10+16=26 प्रकृतियाँ अभेद विवक्षा से बंध अवस्था में नहीं है ऐसा कह आये हैं । सो 93 में से 26 कम करने पर (93–26=67) 67 बाकी रह जाती हैं ॥35॥

पंच णव दोण्णि अट्ठा-वीसं चउरो कमेण सत्तट्ठी ।
दोण्णि य पंच य भणिया, एदाओ उदयपयडीओ ॥36॥

- अन्वयार्थ – ज्ञानावरणादि की (कमेण) क्रम से (पंच) पाँच, (णव) नौ, (दोण्णि) दो, (अट्ठावीसं) अठाईस, (चउरो) चार, (सत्तट्ठी) सडसठ, (दोण्णि) दो (य) और (पंच) पाँच (एदाओ) ये (उदयपयडीओ) उदयप्रकृतियाँ (122) (भणिदा) कहीं हैं ॥36॥

पंच णव दोण्णि अट्ठा-वीसं चउरो कमेण तेणउदी ।
दोण्णि य पंच य भणिया, एदाओ सत्तपयडीओ ॥38॥

- अन्वयार्थ – ज्ञानावरणादिक की (कमेण) क्रम से (पंच) पाँच, (णव) नौ, (दोण्णि) दो, (अट्ठावीसं) अठाईस, (चउरो) चार, (तेणउदी) तिरानवे, (दोण्णि) दो (य) और (पंच) पाँच (एदाओ) ये 148 (सत्तपयडीओ) सत्त्व प्रकृतियाँ (भणिया) कहीं हैं ॥38॥

बंध, उदय, सत्त्व योग्य प्रकृतियाँ

कर्म	बंध योग्य	उदय योग्य	सत्त्व योग्य
ज्ञानावरण	5	5	5
दर्शनावरण	9	9	9
वेदनीय	2	2	2
मोहनीय	26	28	28
आयु	4	4	4
नाम	67 (93–26)	67	93
गोत्र	2	2	2
अन्तराय	5	5	5
कुल	120	122	148

भेदे छादालसयं, इदरे बंधे हवंति वीससयं ।
भेदे सव्वे उदये, बावीससयं अभेदम्मि ॥37॥

- अन्वयार्थ – (बंधे) बन्ध में (भेदे) भेद विवक्षा में (छादालसयं) एक सौ छियालीस प्रकृतियाँ होती हैं । (इदरे) अभेद विवक्षा में, (वीससयं) एक सौ बीस (हवंति) होती हैं ।
- (उदये) उदय में (भेदे) भेद विवक्षा में (सव्वे) सब एक सौ अड़तालीस हैं और (अभेदम्मि) अभेदविवक्षा में (बावीससयं) एक सौ बाईस हैं ॥37॥

बंध, उदय योग्य प्रकृतियाँ

	भेद विवक्षा	अभेद विवक्षा
बंध योग्य	146	120 (146–26)
उदय योग्य	148	122 (148–26)

केवलणाणावरणं, दंसणछक्कं कसायबारसयं ।
मिच्छं च सव्वघादी, सम्मामिच्छं अबंधम्मि ॥39॥

- अन्वयार्थ - (केवलणाणावरणं) केवलज्ञानावरण, (दंसणछक्कं) दर्शनावरण की छह केवलदर्शनावरण और पाँच निद्रा, (कसायबारसयं) बारह कषाय (अनन्तानुबन्धी आदि) (च) और (मिच्छं) मिथ्यात्व (सव्वघादी) ये बीस प्रकृतियाँ सर्वघाति हैं ।
- (अबंधम्मि) अबंध की अपेक्षा (सम्मामिच्छं) सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति भी सर्वघाति है ॥39॥

णाणावरणचउक्कं, तिदंसणं सम्मगं च संजलणं ।
णव णोकसाय विग्घं, छव्वीसा देसघादीओ ॥40॥

- अन्वयार्थ – (णाणावरणचउक्कं) ज्ञानावरण की चार, (तिदंसणं) दर्शनावरण की तीन, (सम्मगं) सम्यक्त्व, (संजलणं) संज्वलन चार कषाय, (णव णोकसाय) नौ नोकषाय, और (विग्घं) पाँच अन्तराय (छव्वीसा) ये छब्बीस प्रकृतियाँ (देसघादीओ) देशघाति हैं ॥40॥

कर्म के भेद (अनुभाग की अपेक्षा)

सर्वघाती

- अपने से प्रतिबद्ध जीव के गुण को पूर्णरूप से घातने का जिसका स्वभाव है वह सर्वघाती कर्म है ।

देशघाती

- अपने से प्रतिबद्ध जीव के गुण को एकदेशरूप से घातने का जिसका स्वभाव है वह देशघाती कर्म है ।

विशेष

जीव के गुणों का घात घातिया कर्म करते हैं इसलिए सर्वघाती और देशघाती ये भेद घातिया कर्म में ही होते हैं ।

जिसका उदय होने पर जीव का गुण सर्वथा प्रकट ना हो, वह सर्वघाती प्रकृति है ।

जिसका उदय होने पर भी जीव का गुण आंशिक प्रकट हो, वह देशघाती प्रकृति है ।

	सर्वघाती	देशघाती
ज्ञानावरण	केवलज्ञानावरण	मतिज्ञानावरण आदि 4
दर्शनावरण	केवलदर्शनावरण	चक्षुदर्शनावरण आदि 3
	निद्राएँ 5	-
मोहनीय	मिथ्यात्व	सम्यक्त्व
	सम्यग्मिथ्यात्व	संज्वलन 4
	अनंतानुबन्धी 4	हास्यादि 9
	अप्रत्याख्यानावरण 4	-
	प्रत्याख्यानावरण 4	
अन्तराय	-	दानांतराय आदि 5

सादं तिण्णेवाऊ, उच्चं णरसुरदुगं च पंचिंदी ।
देहा बंधणसंघादंगोवंगाइं वण्णचऊ ॥41॥
समचउरवज्जरिसहं, उवघादूणगुरुछक्क सग्गमणं ।
तसबारसट्ठसट्ठी, बादालमभेददो सत्था ॥42॥

- अन्वयार्थ – (सादं) साता वेदनीय, (तिण्णेवाऊ) तीन आयु - तिर्यंच, मनुष्य, देवायु (उच्चं) उच्च गोत्र, (णरसुरदुगं) मनुष्यद्विक, देवद्विक (पंचिंदी) पंचेंद्रिय जाति, (देहा) पाँच शरीर, (बंधण संघाद) पाँच बन्धन, पाँच संघात, (अंगोवंगाइं) तीन अंगोपांग, (वण्ण चऊ) वर्णचतुष्क, (समचउर) समचतुरस्र संस्थान, (वज्जरिसहं) वज्रऋषभनाराच संहनन, (उवघादूणगुरुछक्क) उपघात के बिना अगुरुलघुषट्क, (सग्गमणं) प्रशस्त विहायोगति, (तसबारस) त्रसादि बारह (त्रस आदिक दस, निर्माण और तीर्थंकर) (अट्ठसट्ठी) ये अड़सठ प्रकृतियाँ (सत्था) प्रशस्त प्रकृतियाँ हैं। (अभेददो) अभेद विवक्षा से (बादालं) बयालीस प्रशस्त प्रकृतियाँ हैं ॥41-42॥

www.JainKosh.org

घादी णीचमसादं, णिरयाऊ णिरयतिरियदुग जादी ।
संठाणसंहदीणं, चदुपणपणगं च वण्णचऊ ॥43॥
उवघादमसग्गमणं, थावरदसयं च अप्पसत्था हु ।
बंधुदयं पडि भेदे, अडणउदि सयं दुचदुरसीदिदरे ॥44॥

- अन्वयार्थ – (घादी) घातियाँ कर्म की 47 प्रकृतियाँ, (णीचं) नीचगोत्र, (असादं) असाता वेदनीय, (णिरयाऊ) नरकायु, (णिरयतिरियदुग) नरकद्विक, तिर्यंचद्विक, (जादी संठाणसंहदीणं चदुपणपणगं) जाति चार, संस्थान 5, संहनन 5, (वण्णचऊ) अशुभ वर्णचतुष्क, (उवघादं) उपघात, (असग्गमणं) अप्रशस्त विहायोगति, (थावरदसयं) स्थावर-दशक (अप्पसत्था हु) ये अप्रशस्त प्रकृतियाँ हैं ।
- (भेदे) भेदविवक्षा में (बंधुदयं पडि अडणउदि सयं) बन्धरूप पाप प्रकृतियाँ 98 और उदयरूप प्रकृतियाँ 100 हैं।
- (इदरे) इतर अर्थात् अभेदविवक्षा से (दुचदुरसीदि) बन्ध में बयासी और उदय में चौरासी पापरूप प्रकृतियाँ हैं ॥43-44॥

www.JainKosh.org

घातिया की सारी प्रकृतियाँ पापरूप ही होती हैं ।

अघातिया कर्म

- प्रशस्त
  - पुण्यरूप प्रकृतियाँ
- अप्रशस्त
  - पापरूप प्रकृतियाँ

कर्म		प्रशस्त	अप्रशस्त
वेदनीय		साता	असाता
आयु		तिर्यंच, मनुष्य, देव	नरक
नाम कर्म	गति	मनुष्य, देव	नरक, तिर्यंच
	जाति	पंचेन्द्रिय	एकेन्द्रिय — 4
	शरीर, बंधन, संघात	औदारिक — 5	×
	अंगोपांग	औदारिक — 3	×
	संस्थान	समचतुरस्र	न्यग्रोध परिमंडल — 5
	संहनन	वज्रऋषभनाराच	वज्रनाराच — 5
	आनुपूर्वी	मनुष्य, देव	तिर्यंच, नरक
	वर्णादि	वर्ण — 4	वर्ण — 4
	विहायोगति	प्रशस्त	अप्रशस्त
	8 स्वतंत्र प्रकृतियाँ	परघात — 7	उपघात
	10 जोड़े वाली प्रकृतियाँ	त्रस आदि 10	स्थावर आदि 10
गोत्र		उच्च	नीच
	कुल	68	53

प्रकृतियाँ	भेद विवक्षा	अभेद विवक्षा
पुण्य प्रकृतियाँ	68	42
पाप प्रकृतियाँ	47 + 53 = 100	47 + 37 = 84

www.jainkosh.org

	भेद विवक्षा		अभेद विवक्षा	
	बंध	उदय	बंध	उदय
पुण्य प्रकृतियाँ	68	68	42	42
पाप प्रकृतियाँ	45 + 53 = 98	47 + 53 = 100	45 + 37 = 82	47 + 37 = 84

पाप प्रकृतियों में उदय प्रकृतियों से बंध प्रकृतियाँ 2 कम होती हैं क्योंकि सम्यक्त्व और मिश्र प्रकृति का बंध नहीं होता ।

www.JainKosh.org

पढमादिया कसाया, सम्मत्तं देससयलचारित्तं ।
जहखादं घादंति य, गुणणामा होंति सेसावि ॥45॥

- अन्वयार्थ - (पढमादिया कसाया) प्रथमादिक कषाय क्रम से (सम्मत्तं) सम्यक्त्व (देससयलचारित्तं) देशचारित्र, सकलचारित्र (य) और (जहखादं) यथाख्यात चारित्र का (घादंति) घात करते हैं अर्थात् अनंतानुबंधी कषाय सम्यक्त्व का, अप्रत्याख्यानावरण कषाय देशचारित्र का, प्रत्याख्यानावरण कषाय सकलचारित्र का और संज्वलन कषाय यथाख्यातचारित्र का घात करते हैं। अतः (गुणणामा) गुणों के अनुसार नाम वाले हैं।
- (सेसावि) इसी तरह शेष नोकषाय और ज्ञानावरण आदि भी सार्थक नाम वाले हैं ॥45॥

www.JainKosh.org

अंतोमुहुत्त पक्खं, छम्मासं संखऽसंखणंतभवं ।
संजलणमादियाणं, वासणकालो दु णियमेण ॥46॥

- अन्वयार्थ - (संजलणमादियाणं) संज्वलन आदिकों का (वासणकालो) वासना काल क्रम से (णियमेण) नियम से (अंतोमुहुत्त पक्खं) अन्तर्मुहूर्त, एक पक्ष (15 दिन) (छम्मासं) छह् मास और (संखसंखणंतभवं) संख्यात, असंख्यात, अनंतभव है ॥46॥

वासना काल

उदय का अभाव होने पर भी कषायों का संस्कार जितने काल रहता है, उसे वासना काल कहते हैं ।

कषाय	वासना काल
अनंतानुबंधी	संख्यात, असंख्यात, अनंत भव
अप्रत्याख्यान	6 मास
प्रत्याख्यान	15 दिवस (1 पक्ष)
संज्वलन	अन्तर्मुहूर्त

देहादी फासंता, पण्णासा णिमिणतावजुगलं च ।
थिरसुहपत्तेयदुगं, अगुरुतियं पोग्गलविवाई ॥47॥

- अन्वयार्थ – (देहादी फस्संता) शरीरनामकर्म से स्पर्शनामकर्म तक (पण्णासा) (50) पचास प्रकृतियाँ (णिमिणतावजुगलं) निर्माण, आतपयुगल अर्थात् आतप और उद्योत (थिरसुहपत्तेयदुगं) स्थिरयुगल, शुभयुगल, प्रत्येक युगल, (अगुरुतियं) अगुरुत्रिक अर्थात् अगुरुलघु, उपघात, परघात (ये 62 प्रकृतियाँ) (पोग्गलविवाई) पुद्गल विपाकी हैं ॥47॥

पुद्गल-विपाकी प्रकृतियाँ

जिनका उदय पुद्गल में ही होता है,

वे पुद्गल-विपाकी प्रकृतियाँ हैं ।

जैसे शरीर नामकर्म के उदय से पुद्गल ही शरीररूप होता है ।

पुद्गल-विपाकी प्रकृतियाँ

संक्षेप में

देह प्रकृति से लगाकर स्पर्श तक	50 प्रकृतियाँ
निर्माण, आतप, उद्योत	3
अगुरुलघु, उपघात, परघात	3
स्थिर-अस्थिर	2
शुभ-अशुभ	2
प्रत्येक-साधारण	2
कुल	62

देहादि से फासंता = 50

8 स्वतंत्र प्रकृतियों में से उच्छ्वास, तीर्थंकर को छोड़कर शेष 6

10 जोड़ों में से 3 जोड़े = 6

शरीर	• 5
बंधन	• 5
संघात	• 5
संस्थान	• 6
अंगोपांग	• 3
संहनन	• 6
वर्ण	• 5
गंध	• 2
रस	• 5
स्पर्श	• 8
कुल	50

आऊणि भवविवाई, खेत्तविवाई य आणुपुव्वीओ ।
अट्ठुत्तरि अवसेसा, जीवविवाई मुणेयव्वा ॥48॥

- अन्वयार्थ - (आऊणि) चारों आयु (भवविवाई) भवविपाकी हैं (य) और (आणुपुव्वीओ) चारों आनुपूर्वी (खेत्तविवाई) क्षेत्रविपाकी हैं ।
- (अवसेसा) शेष (अट्ठुत्तरि) अठहत्तर प्रकृतियाँ (जीवविवाई) जीवविपाकी हैं (मुणेयव्वा) ऐसा जानना चाहिये ॥48॥

भव-विपाकी

जिनका विशिष्ट भव में ही उदय होता है, वे भव-विपाकी प्रकृतियाँ हैं ।

चार आयु कर्म भव-विपाकी हैं ।

अन्य कर्म तो संक्रमित होकर अन्य रूप भी उदय में आते हैं, पर आयु तो उसी भव में ही नियम से उदय में आती है, अन्यत्र नहीं । इसलिए आयु ही भवविपाकी है ।

क्षेत्र-विपाकी

परलोक के लिए गमन करते हुए क्षेत्र में ही जिसका उदय होता है, वह क्षेत्र-विपाकी कर्म है ।

4 आनुपूर्वी क्षेत्र-विपाकी प्रकृतियाँ हैं ।

शेष प्रकृतियाँ $148 - 62 - 4 - 4 = 78$ जीवविपाकी हैं ।

वेदणियगोदघादीणेकावण्णं तु णामपयडीणं ।
सत्तावीसं चेदे, अट्ठतरि जीवविवाईओ ॥49॥

- अन्वयार्थ – (वेदणियगोदघादीण) वेदनीय की दो, गोत्र की दो और घातिया कर्म की 47 (एकावण्णं) ये 51 प्रकृतियाँ
- (णामपयडीणं) नामकर्म की (सत्तावीसं) सत्ताईस
- (चेदे) ये (अट्ठत्तरि) अठहत्तर प्रकृतियाँ (जीवविवाईओ) जीवविपाकी हैं ॥49॥

जीवविपाकी

जो प्रकृतियाँ
जीव की नरकादि पर्याय को
उत्पन्न करने का कारण हैं,
वे जीवविपाकी प्रकृतियाँ हैं ।

www.JainKosh.org

जीवविपाकी कर्म

घातिया	वेदनीय	गोत्र	नाम
47	2	2	27

कुल 78

तित्थयरं उस्सासं, बादरपज्जत्तसुस्सरादेज्जं ।
जसतसविहायसुभगदु, चउगइ पणजाइ सगवीसं ॥50॥

- अन्वयार्थ – नामकर्म की (तित्थयरं) तीर्थंकर (उस्सासं) उच्छ्‌वास (बादरपज्जत्तसुस्सरादेज्जं जसतसविहायसुभगदु) बादर-सूक्ष्म, पर्याप्त-अपर्याप्त, सुस्वर-दुस्वर, आदेय-अनादेय, यशस्कीर्ति-अयशस्कीर्ति, त्रस-स्थावर, प्रशस्त-अप्रशस्त विहायोगति, सुभग-दुर्भग, (चउगइ) चार गति, (पणजाइ) पाँच जाति (सगवीसं) ये सत्ताईस (27) प्रकृतियाँ जीवविपाकी हैं ॥50॥

गदि जादी उस्सासं, विहायगदि तसतियाण जुगलं च ।
सुभगादिचउज्जुगलं, तित्थयरं चेदि सगवीसं ॥51॥

- अन्वयार्थ – (गदि) चार गति, (जादी) पाँच जाति, (उस्सासं) उच्छ्‌वास (विहायगदि) दो विहायोगति (तसतियाण जुगलं च) त्रसत्रिकों का युगल अर्थात् त्रस-स्थावर, बादर-सूक्ष्म, पर्याप्त-अपर्याप्त (सुभगादी चउज्जुगलं) सुभगादि-चतुष्क का युगल अर्थात् सुभग-दुर्भग, सुस्वर-दुस्वर, आदेय-अनादेय, यशस्कीर्ति-अयशस्कीर्ति (च) और (तित्थयरं) तीर्थंकर (इदि) इस प्रकार नामकर्म की (सगवीसं) सत्ताईस प्रकृतियाँ जीवविपाकी हैं ॥51॥

नामकर्म की 27 जीवविपाकी प्रकृतियाँ

गति	जाति	उच्छ्वास	विहायोगति	7 जोड़े	तीर्थंकर	कुल
4	5	1	2	14	1	27

7 जोड़े

त्रस - स्थावर

बादर - सूक्ष्म

पर्याप्त - अपर्याप्त

सुभग - दुर्भग

सुस्वर - दुस्वर

आदेय - अनादेय

यशः - अयश

www.JainKosh.org

तीर्थंकर
प्रकृति
जीवविपाकी
कैसे ?

तीर्थंकर-
रूप
अवस्था
किसकी है
?

जीव की
या
बाहरी
वस्तुओं
की ?

वह जीव की
ही अवस्था
कही जायेगी,
बाह्य पदार्थों
की नहीं ।